ISBN: 978-81-954010-8-6

भारतीय कृषि तथा पर्यावरण के विशेष संदर्भ में हरित क्रान्ति का समय परिप्रेक्ष्य में बदलता स्वरूपः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ0 विनीत नारायण दूबे
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
भूगोल विभाग,
श्री मुरली मनोहर टाउन स्नातकोत्तर महाविद्यालय
बलिया (उ0प्र0) भारत

सारांश

क्रान्ति' शब्द का सामान्य अर्थ किसी भी क्षेत्र विशेष में 'अभूतपूर्व' अथवा 'तीव्र गति से होने वाले' सकारात्मक परिवर्तनों से समझा जाता है। विश्व संदर्भ पर दृष्टिपात किया जाय तो प्रमुख क्रान्तियों में स्वतंत्रता आन्दोलन से सम्बन्धित क्रान्ति, (उपनिवेशवादियों के विरूद्ध) हरित क्रान्ति (खाद्य समस्या से मुक्ति के लिए उत्पादन से सम्बन्धित), नीली क्रान्ति (मत्स्य उत्पादन), श्वेत क्रान्ति (दुग्ध उत्पादन) तथा पीली क्रान्ति (तैलीय तथा दलहनी फसलों से सम्बन्धित) प्रमुख रही है। इन प्रमुख क्रान्तियों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण 'हरित क्रान्ति' प्रमुखतः विश्व की अत्यावश्यक आवश्यकताओं में प्रमुख भूखमरी तथा खाने की समस्या के समाधान से सम्बन्धित है। 'हरित क्रान्ति' शब्द में हरित शब्द, 'हरा रंग' कृषि फसलों की हरीतिमा से तथा 'क्रान्ति' शब्द इस दिशा में किये गये सकारात्मक परिवर्तनों से सम्बन्धित है। सामान्य अर्थों में इसे अल्प समय में किये जाने वाले कृषिगत उत्पादन में तीव्र

ISBN: 978-81-954010-8-6

गति से होने वाले सकारात्मक परिवर्तनों तथा कृषि उन्नयनों से समझा जाता है। पिछली सदी के छठें दशक में एक बड़े कृषि आंदोलन का शुभारम्भ करने वाले, नोबल शांति पुरस्कार से विभूषित डॉ0 नॉर्मन बोरलॉग (मार्च, 1914-सितम्बर, 2009 ई0) को कृषि के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान देने के कारण पूरा संसार 'हरित क्रान्ति के जनक' के रूप में जानता है। इनके 'रॉक फेलर फाउण्डेशन (मैक्सिको)' समिति के सदस्यों के अभूतपूर्व अनुसंधानों के परिणामस्वरूप ही 20वीं सदी में इस क्रान्ति ने तीसरी दुनिया के करीब एक अरब भूखी और कुपोषित जनता को दो जून की रोटी उपलब्ध करायी थी। हरित क्रान्ति एक नवीन कृषि से सम्बन्धित औद्योगिक, रासायनिक एवं एक वैज्ञानिक कृषि प्रणाली थी, जिसने सम्पूर्ण दुनिया में खाद्य सुरक्षा के लिए आशा का संचार किया था। इसी के परिणामस्वरूप 1970 तक तीसरी दुनिया के विकासशील देशों से अपने लिए भोजन की आपूर्ति में पूर्णतः आत्मनिर्भरता प्राप्त कर लिया था। भारतीय कृषि के विशेष संदर्भ में प्रोफेसर मोकाम्बु साम्बशिवन स्वामिनाथन् को भारतीय हरित क्रान्ति का जनक माना जाता है। भारत में हरित क्रान्ति का वास्तविक शुभारम्भ 1967-68 ई0 से हुआ। इसके बाद के वर्षों में मुख्यतः गेहूँ, चावल, मक्का, ज्वार तथा बाजरे के उत्पादन में अप्रत्याशित वृद्धि देखी गयी थी, क्योंकि उन्नतिशील अति उत्पादनशील प्रजातियों (एच0वाई0वी0), उर्वरकों, कीटनाशकों तथा वैज्ञानिक ढंग से खेती का प्रचार प्रसार हुआ। हरित क्रान्ति के अन्तर्गत एक योजनागत ढाँचे में अधिक अति उत्पादनशील प्रजातियों, परिष्कृत नवीन प्रामाणिक बीजों, रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशी रसायनों, लघु सिंचाई परियोजनाओं, कृषि शिक्षा से सम्बन्धित नवीन अनुसंधानों, पौध संरक्षण, बहुफसली कृषि, भूमि संरक्षण तथा शस्य गहनता पर विशेष बल दिया गया। परिणामस्वरूप फसलों का उत्पादन कई गुना बढ़ गया, तथा जहाँ भारत

ISBN: 978-81-954010-8-6

खाद्यान्नों का आयात करता था, वहीं अब निर्यातक बन गया। भारत में हरित क्रान्ति को प्रारम्भ हुए आज 53 वर्ष बीत चुके हैं, खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता के कारण आज 'हरित क्रान्ति' भारतीय कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता के संदर्भ में वरदान सिद्ध हुई है। 85 वर्षीय कृषि वैज्ञानिक प्रो0 स्वामीनाथन् के अथक परिश्रम के परिणामस्वरूप ही भारत में गेहूँ तथा चावल की बौनी प्रजातियों के प्रसार तथा उत्पादन, 'बायोविलेज लिंक, इण्डिया कार्यक्रम, भारत में 'भूख से मुक्ति का कार्यक्रम तथा 'ग्रीन' के स्थान पर 'एवर ग्रीन रिवोल्यूशन' आदि प्रारम्भ हुआ। हरित क्रान्ति के जनक प्रो0 नॉर्मन बोरलॉग की 2009 में हुए निधन के बाद पूरे विश्व में भूख से मुक्ति दिलाने के अभियान की जिम्मेदारी वर्तमान समय में प्रो0एम0एस0स्वामीनाथन ने सम्भाल लिया है। वह आज भी विश्व की इस समस्या के समाधान हेतु सदैव तत्पर है।

प्रस्तुत शोध-पत्र में जहाँ हरित क्रान्ति से सम्बन्धित कृषि उत्पादन तथा उत्पादकता के विभिन्न सकारात्मक पहलुओं अध्ययन किया गया है तथा हरित क्रान्ति को विश्व तथा भारतीय खाद्य समस्या के समाधान के लिए वरदान माना गया है। भारत को जहाँ हरित क्रान्ति से अनेक लाभ हैं, वहीं पर्यावरणीय दृष्टि से इसके नकारात्मक पहलू भी वर्तमान में द्रष्टव्य हैं। सम्पूर्ण विश्व के पर्यावरणविदों, प्रगतिशील चिंतकों, अर्थशास्त्रियों तथा कृषि वैज्ञानिकों के लिए हरित क्रान्ति वर्तमान में आलोचना का विषय बना हुआ है। उदाहरणार्थ भारतीय संदर्भ में जहाँ इससे खाद्य समस्या का निदान हुआ है, वहीं उससे अधिक समस्याएँ भी बढ़ी हैं। एक सुखद घटना होने के बावजूद हरित क्रान्ति ने निर्धन और विकासशील देशों की परम्परागत कृषि प्रणाली पर दूरगामी नकारात्मक प्रभाव डाला है। नवीन कृषि प्रणाली में अधिक उर्वरकों, कीटनाशकों तथा सिंचाई की अधिक आवश्यकताओं के

ISBN: 978-81-954010-8-6

कारण भूमि का अनुपजाऊपन तथा जल के संकट की समस्या बढ़ी है। नवीनतम कृषि प्रणाली ने कृषि जैव विविधता को जहाँ क्षति पहुँचायी, वहीं उर्वरकों तथा रसायनों के अतिप्रयोग से खाद्यान्न भी प्रभावित हुआ है। जिसका सीधा दुष्प्रभाव मनुष्यों, जानवरों, जीव जन्तुओं तथा प्राकृतिक वनस्पतियों पर पड़ा है। पर्यावरणीय दृष्टि से हरित क्रान्ति के अन्य दुष्प्रभावों में, खेती में अधिक धन की आवश्यकता, कृषि में संलग्न जनसंख्या का शहरों की ओर पलायन, परम्परागत कृषि का औद्योगिक कृषि में परिवर्तन, मिट्टी की उर्वरता तथा जल स्तर में कमी, मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव, देशी खेती का औपनिवेशन आदि प्रमुख हैं। एक ओर 'बढ़ती जनसंख्या' दूसरी ओर 'प्रदूषित होता पर्यावरण' तथा 'गर्म होती धरती' ऐसी स्थिति में सम्पूर्ण विश्व के खाद्यान्न समस्या के समाधान के लिए विश्व स्तर पर कृषि में बदलाव की आवश्यकता है। भविष्य में होने वाली खेती की परिकल्पनाओं में अधिक तापमान में उत्पादन देने वाले कृषि बीजों का विकास, जैविक खेती का प्रसार, कृषि में 'नैनो तकनीकी' का प्रयोग, शहरों में प्लाई ओवर की तरह कृषि भूमि का विकास, सागर में तैरते हुए खेत, अंतरिक्ष में खेती तथा बागान कृषि आदि महत्वपूर्ण हो सकते हैं।

प्रस्तावना

विश्व में विभिन्न फसलों के विशेष उत्पादन से सम्बन्धित अनेक क्रांतियाँ हुई हैं, जिसमें 20वी सदी में 'हरित क्रांतिं' प्रमुख खाद्यान्न गेहूँ तथा चावल के उत्पादन से विशेष समबन्धित है। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में इस कृषि क्रांति ने तीसरी दुनिया के लगभग एक अरब भूखी तथा कुपोषित जनसंख्या को खाद्यान्न उपलब्ध करायी। परिणामस्वरूप 1970 के दशक तक विश्व के विकासशील देश खाद्यान्न आपूर्ति में पूर्णतः आत्मनिर्भर हो गये। हरित क्रांति का तात्पर्य देश के सिंचित एवं असिंचित कृषि क्षेत्रों में अधिक उत्पादन

ISBN: 978-81-954010-8-6

शील संकर तथा बौनी प्रजाति के बीजों के प्रयोग से फसलों के उत्पादन में अत्यधिक वृद्धि से है। यह एक नवीन कृषि प्रणाली थी, जिसमें औद्योगिक तथा रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशी रसायनों तथा संकर प्रजातियों के बीजों का अत्यधिक प्रयोग किया गया। 'हरित क्रांति' में गेंहूँ तथा चावल से सम्बन्धित वर्णसंकर प्रजातियां अत्यधिक बौनी किस्म की थी, जिसके पौधे छोटे-छोटे होते थे, लेकिन उनकी शक्ति (उर्वरकों) का उपयोग फसलों की बालियों तथा उनके दानों में अधिक दिखाई देता था, जिसमें उत्पादन अधिक होता था। जब फसलों के बीज उन्नतशील प्रजाति के नहीं होते हैं, तो उनके पौधे बड़े- बड़े होते हैं जो फसलों के काफी तत्वों को पौधों के विकास के लिए खींच लेते है, फलतः उनमें बालियॉ तथा दाने कम तत्वों की प्राप्ति के कारण कम पुष्ट हो पाते हैं। 'हरित क्रांति' के जनक प्रोफेसर नॉर्मन बोरलॉग को माना जाता हैं, जिन्होंने पिछली सदी के छठे दशक में एक बड़े कृषि उत्पादन से सम्बन्धित आंदोलन का शुभारंभ करके भारत सहित विश्व के अनेक देशों के लोगों के लिए खाद्यान्न के अति उत्पादन से सम्बन्धित 'हरित क्रांति' की नींव रखी थी। कृषि तथा खाद्य उत्पादन में इसी महत्वपूर्ण योगदान के कारण 1970 ई0 में उन्हें भूखी दुनिया को रोटी और शांति के लिए नोबुल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। भारत में भी 'हरित क्रांति' का वास्तविक शुभारम्भ 1966-67 ई0 शुरू हुआ। नॉर्मन बोरलॉग को 'भारत का अन्नदाता' तथा दुनिया उन्हें प्यार से 'प्रोफेसर ह्वीट' भी कहती है। उन्होंने सदियों से संचालित परम्परगात कृषि प्रणाली की दिशा तथा दशा में अभूत पूर्व परिवर्तन किया था। मृदा के द्वारा अति उत्पादन लेने के आलोचनाओं के सम्बन्ध में उन्होंने विश्व को बताया कि 'हरित आन्दोलन' मनुष्य को अपनी अन्नदात्री धरती माता के विरूद्ध नहीं खड़ा करता वरन् उसकी बौद्धिक क्षमता का धरती के संसाधनों के विवेकपूर्ण सदुपयोग में लगाकर अपने प्रजाति के

ISBN: 978-81-954010-8-6

जीवन स्तर में संबृद्धि करता है। ऋग्वेद में पृथ्वी की महत्ता को स्वीकार करते हुए कहा भी गया है कि "अन्नः बहूमेतिव्यंजनात् अन्नं कुर्वीत तद्व्रतम् पृथ्वी का अन्न।" "पृथ्वी की सारी सृष्टि का आधार ही भोजन है। हे! उत्साही मानव भोजन की प्राप्ति और भोजन के उत्पादन के सभी संभव प्रयास करो।"

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध कार्य में भारतीय कृषि तथा पर्यावरण के विशेष सन्दर्भ में 'हरित क्रांति' में समय परिप्रेक्ष्य में बदलते हुए स्वरूप का अध्ययन करना ही मुख्य उद्देश्य है। नार्मन बोरलॉग की 'हरित क्रांति' क्या है? इसकी शुरुआत उन्होंने कब क्यों तथा कैसे की? भारतीय कृषि तथा पर्यावरण पर समय परिप्रेक्ष्य के अनुसार इसका स्वरूप कैसे परिवर्तित हुआ? तथा आज 'हरित क्रांति' का कितना तथा किस प्रकार का प्रभाव पड़ रहा है तथा उसमें किन-किन सुधारांे की आवश्यकता है आदि तथ्यों पर विचार किया गया है।

विधितंत्र

भारतीय कृषि तथा पर्यावरण पर 'हरित क्रांति' के प्रभाव के सन्दर्भ में द्वितीयक आॅकड़ों का प्रयोग किया गया है। आॅकड़े नॉर्मन वोरलॉग के 1996 में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान नयी दिल्ली के 34वें दीक्षांत समारोह के अवसर पर दिये गये व्याख्यान अंश, विभिन्न शोध पत्रों, लेखों, समाचारपत्रों, पत्रिकाओं तथा पुस्तकों से सम्बन्धित अध्ययनों पर आधारित है।

'हरित क्रांति' की ऐतिहासिक पृष्ठभूमिः

नॉर्मन अर्नेस्ट बोरलॉग यूरोपीय मूल के अमेरिकी नागरिक थे। उनके परदादा ओले ओल्सन डिबेविक 1854 में नार्वे के लेकंगर नामक कस्बे से डेन विस्कान्सिन आये तथा क्रेस्कों (आयोवा) के समीप साउडे में बस

ISBN: 978-81-954010-8-6

गये। पिता हेनरी ओलिवर तथा मॉ क्लारा बोरलॉग की चार संतानों में नॉर्मन सबसे बड़े थे। साउडे में ही उनका 106 एकड़ का फार्म हाउस था, यही नार्मन का जन्म भी 25 मार्च 1914 को हुआ था। अपने स्नातक कक्षाओं में ही वह पादप रोग विशेषज्ञ प्रोफेसर एल्विन स्टैकमैन का सिग्मा ग्1व्याख्यान विश्ेष रूप से सुना करते थे। इन व्याख्यानों ने इन्हें इतना प्रभावित किया कि उन्होंने प्लांट पैथोलॉजी को ही अपना मुख्य विषय चुना। 1944 ई0 में फोर्ड तथा रॉकफेलर प्रतिष्ठान मैक्सिको की सरकार द्वारा अनुदानप्राप्त सहकारी गेहूँ अनुसंधान और उत्पादन कार्यक्रम, नामक संस्थान में आनुवांशिकी और पादप रोग विज्ञानी के पद पर कार्य करने लगे। मैक्सिकों में अपन सहयोगी सदस्यों के साथ 16 वर्षो तक गेहूँ के किस्मों से सम्बन्धित शोध कार्य करते रहे। मैक्सिकों में अधिक गेहूँ उत्पादन के लक्ष्य को लेकर वह 10 वर्षो तक फसलों पर संकरण प्रयोग करते रहे, जिसमें छोटे पौधे हों, विभिन्न वातावरण में पैदा होने की क्षमता हो तथा अधिक बालियॉ व दाने से पूर्ण रोग प्रतिरोधी गुणों आदि से पूर्ण हो। इस प्रकार अधिक उत्पादन शील किस्में हाई ईल्डिंग वैराइटीज (H.Y.V.)) विकसित की गई जिसमें लेरमा राजो - 64, सुप एक्स, सियेट सेरोस आदि प्रमुख थीं। गेहूँ में छोटे और मोटे तने के विकास के लिए उन्होंने 1953 में ही नोरिन - 10 नामक जापानी किस्म तथा बेवर - 14 अमेरिकी प्रजाति के संकरण से अपनी रोग प्रतिरोधी किस्म से संकरित कर ऐसे बीजों का अनुसंधान किया जो शीतोष्ण तथा समशीतोष्ण वातावरण में काफी विकसित हुई। इन्हीं किस्मों ने मैक्सिकों की कृषि की काया ही बदल दी, जिससे वह गेहूँ के उत्पादन में आत्मनिर्भर ही नहीं हुआ, वरन् गेहूँ का निर्यातक भी हो गया। विश्व के सर्वाधिक प्रतिष्ठित कृषि वैज्ञानिक प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित तथा भूखी जनता को खाद्यान्न उपलब्ध कराने वाले 'हरित क्रांति' के जनक प्रो0 नॉर्मन बोरलॉग का निधन 95 वर्ष की आयु में

ISBN: 978-81-954010-8-6

सितम्बर, 2009 को (डलास) टेक्सास (यू0एस0ए0) में हुआ।

'हरित क्रांति' भारतीय सन्दर्भ में

'हरित क्रांति' भारत के सन्दर्भ में भी कृषि में लागू की गयी उस नवीन विचारधारा क परिणाम है जो 1960 के बाद परम्परागत कृषि में नवीनतम तकनीकी के प्रयोग के बाद प्रगट हुई। इसी क परिणामस्वरूप 1967-68 तथा 1970-71 में देश में खाद्यान्न उत्पादन में अप्रत्यासित वृद्धि हुई। भारतीय कृषि में नवीन तकनीकी का प्रयोग 1960-61 में ही प्रारम्भ हो गया था। सर्वप्रथम 1959 ई0 में फोर्ड फाउण्डेशन ने कृषि विशेषज्ञों एवं वैज्ञानिकों के एक दल को भारत आमन्त्रित किया गया। कृषि की दशाओं का अध्ययन करके अप्रैल 1959 में दल ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। प्रतिवेदन में खाद्य से सम्बन्धित जो समस्याएं प्रस्तुत की गयी उसके आधार पर सरकार द्वारा खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि के लिए सघन अभियान चलाने का निश्चय किया गया तथा कार्यक्रमों के संचालन के लिए पुनः फोर्ड फाउण्डेशन के कृषि विशेषज्ञों को आमंत्रित किया गया। अमेरिकी कृषि विभाग (यू0एस0डी0ए0) के द्वारा गेहूँ की कुछ किस्मों का क्षेत्र परीक्षण भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली में मार्च 1962 से प्रारम्भ किया गया। भारत के प्रख्यात कृषि वैज्ञानिक एवं किसान आयोग के वर्तमान अध्यक्ष प्रो0 मोकाम्बु साम्बशिवन स्वामिनाथन् को भारतीय परिवेश के अनुकूल अधिक उपज देने वाली प्रजातियों के विकास तथा अनुसंधान में उल्लेखनीय योगदान देने के लिए 'भारत में 'हरित क्रांति' का जनक माना जाता है। कृषि से सम्बन्धित विशिष्ट कार्यो में योगदान के कारण वर्ष 1966 में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान दिल्ली में निदेशक, 1972 में महानिदेशक, 1982 में अन्तर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान में निदेशक के पद को सुशोभित किया। इन्होंने 1962 ई0 में संस्थान के तत्कालीन निदेशक डॉ0

ISBN: 978-81-954010-8-6

बी0पी0 पाल से कहा कि डॉ0 बोरलॉग को भारत आने का नियंत्रण दिया जाय तथा उनकी बौनी प्रजातियों को यहाँ विकसित करने के लिए आग्रह किया जाय। निवेदन के बाद प्रो0 बोरलॉग तो भारत नहीं आए लेकिन रॉक फेलर प्रतिष्ठान के अंतर्राष्ट्रीय गेहूँ विकास कार्यक्रम के निदेशक ग्लेन एंडर्सन भारत आए तथा आवश्यक प्रशासनिक प्रक्रिया के बाद चार उत्कृष्ट किस्मों के एक सौ किलोग्राम बीज संस्थान को प्राप्त हुए। वह भारत में 1975 तक नई दिल्ली में कार्यरत रहे। गेहूँ की नई किस्मों का क्षेत्र परीक्षण कानपुर, पंतनगर, दिल्ली, पुणे, इन्दौर आदि कई स्थानों पर किया गया। देश में खाद्यान्न की भयंकर समस्या पाकिस्तान से युद्ध के कारण तत्कालीन प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने उस समय "जय जवान-जय किसान" का नारा दिया। अनाज के संरक्षण तथा उसके उत्पादन पर विशेष बल दिया गया। प्रारम्भ में नॉर्मन बोरलॉग के विकसित किस्मों का विरोध किया गया लेकिन देश में भीषण अकाल और युद्ध को देखते हुए उसे अपनाने के अलावा देश के सामने कोई विकल्प भी नहीं था। 1965 ई0 में 200 टन तथा 1966 में 1800 टन लेरमा राजों तथा सोनोरा आदि बीका आयात किया गया। इन प्रजातियों की खेती से 1970 तक देश में गेहूँ उत्पादन करीब दो गुना बढ़ गया, अर्थात् 1.23 करोड टन के स्थान पर 2.1 करोड़ टन गेहूँ का उत्पादक हुआ। उनकी अन्य किस्मों की खेती को बढ़ावा देने के साथ ही साथ वर्ष 1974 तक भारत खाद्य उत्पादन में पूर्णतः आत्म निर्भर हो गया। (तालिका-01 एवं 02) अति उत्पादनशील प्रजातियों के लिए यद्यपि अधिक सिंचाई, उर्वरकों, कीटनाशी रसायनों श्रम एवं अन्न से ग्रहण की भी अधिक आवश्यकता हुई। इस उपलब्धि के लिए अमेरिका की अंतर्राष्ट्रीय विकास एजेंसी (यू0एस0ए0 आइडी), यूस एड के प्रमुख ने प्रो0 नॉर्मन वोरलॉग के इस महत्वपूर्ण अनुसंधान के कार्य अभियान को ही 'हरित क्रांति' (ग्रीन

ISBN: 978-81-954010-8-6

रेवोल्यूशन)) का नाम दिया। यह अभियान लैटिन अमेरिका के छः, मध्य पूर्व के छः तथा दक्षिण पूर्व एशिया के अन्य भागों में सफल रहा। अफ्रीका महाद्वीप में 'हरित क्रांति' की विफलता के प्रमुख कारणों में बुनियादी संरचना का अभाव, सामाजिक कार्यकर्ताओंतथा जनता का प्रबल विरोध, पर्यावरण विशेषज्ञों की चेतावनी तथा अमेरिकी प्रतिष्ठनों का राजनीतिक दबाव प्रमुख रूप से उत्तरदायी कारक माने जाते है। भारत में भी चावल की बौनी जैपोनिका प्रजाति तथा इंडिका किस्मों से अति उत्पादक प्राप्त करने के लिए अधिक संवेदनशील प्रजातियों के लिए कीटनाशी रसायनों के अधिक उपयोग से पर्यावरणीय दुष्प्रभाव को दृष्टिपथ में रखते हुए तत्कालीन कृषि निदेषक डॉ0 आर0 एच0 रिद्वारिया केन्द्रीय चावल अनुसंधान संस्थान, कटक तथा म0प्र0 चावल अनुसंधान संस्थान, रायपुर के विरोध के कारण उन्हें पद से हटा दिया गया। इस प्रकार भारत सहित, एशिया के अन्य देशों मे वृहद पैमाने पर इसकी खेती की जाने लगी। वर्ष 1965 ई0 में 200 एकड़ भूमि से खेती का शुभारम्भ होने के बाद 1980 ई0 तक यह चार करोड़ एकड़ भूमि पर की जाने लगी। (तालिका-03) 'हरित क्रांति' का प्रथम चरण 1966-67 से 1980-81 तक तथा द्वितीय चरण 1980-81 से 1996-97 तक माना जाता है। 'हरित क्रांति' के अन्तर्गत प्रमुख फसल उत्पादक भारतीय राज्यों में पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, हिमांचल प्रदेश, तमिलनाडु एवं आन्ध्र प्रदेश प्रमुख है, यद्यपि देश के अन्य राज्य भी इससे सम्बन्धित उत्पादन करते है। 1960 के दशक के उत्तरार्ध में पंजाब में गेहूँ के उत्पादन में चमत्कारी प्रभाव देखा गया, जिसमें 1965 की तुलना में 1969 में गेहूँ का दुगुना उत्पादन हुआ।

'हरित क्रांति' के आधार भूत कारक तत्वः

'हरित क्रांति' में अति उत्पादन के प्रमुख आधारभूत कारक तत्वों में

ISBN: 978-81-954010-8-6

आधुनिक कृषि का निवेश हैं। इनके अत्यधिक प्रयोग द्वारा ही 'हरित क्रांति' सफल हो सका, जिसमें आधुनिक बीजों का प्रयोग, रासायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशी रसायनों का प्रयोग, सिंचाई की अत्यधिक सुविधाएं तथा नवीन वैज्ञानिक कृषि प्रमुख है। अन्य प्रमुख तत्वों में बहुफसली कार्यक्रम द्वारा शस्य गहनता में वृद्धि, सार्वजनिक संस्थाएं न्यूनतम समर्थन एवं वसूली मूल्य की गारण्टी, कृषि ऋण की उपलब्धता, अधिक उत्पादनशील (ह्ल्ट) प्रजातियॉं, सिंचाई सुविधा का विकास, फसल सुरक्षा के लिए कीटनाशी रसायनों की व्यवस्था एवं प्रबन्धन कृषि में नवीन पंजीकरण, नवीन रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग आदि महत्वपूर्ण हैं।

तालिका - 01

भारत में विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल (लाख हेक्टेयर में)

फसल	1950-51	1960-61	1980-81	1990-91
खाद्यान्न	973	1156	1267	1278
चावल	308	341	401	427
गेहूँ	98	129	223	242
ज्वार	156	184	158	144
बाजरा	90	115	117	105

ISBN: 978-81-954010-8-6

गन्ना	76	24	27	37

तालिका - 02

विभिन्न फसलों का उत्पादन (लाख टन में)

फसल	**1950-51**	**1960-61**	**1980-81**	**1990-91**
खाद्यान्न	508	820	1296	1764
चावल	206	346	536	743
गेहूँ	65	110	363	551
ज्वार	65	98	104	117
बाजरा	26	33	53	69
गन्ना	571	1100	1542	2410

तालिका - 03

भारत में अधिक उपज वाली किस्मों के बीजों के अन्तर्गत क्षेत्र (प्रतिशत में)

फसल	**1990-91**	**1992-93**	**1994-95**
चावल	65.8	68.0	74.6
गेहूँ	84.3	90.8	90.7

ISBN: 978-81-954010-8-6

ज्वार	46.5	52.6	60.2
बाजरा	48.6	52.9	53.4
गन्ना	44.1	49.8	54.9

समय परिपेक्ष्य में 'हरित क्रांति' के बदलने स्वरूप का प्रभाव और उपलब्धियाँ:

भारत में 'हरित क्रांति' की शुरूआत के 44 वर्ष से भी अधिक समय बीत चुका है। क्रांति के प्रारम्भिक काल में भूखमरी, अकाल तथा भारत पाकिस्तान युद्ध के कारण देश में खाद्यान्न की मुख्य समस्या थी जिसके समाधान में 'हरित क्रांति' ने निश्चित ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। जहॉ देश के लोग पेट भरने को मुहताज से वहीं 1970 के बाद हमारी खाद्यान्न स्थिति बदल गई तथा देश खाद्यान्नों विशेषकर चावल तथा गेहूँ के उत्पादन में पूर्ण समर्थ हो गया। कृषि उत्पादन तथा उत्पादकता में वृद्धि हुई। 1966-67 की तुलना में 1970-71 में आठ गुना कृषि क्षेत्रफल का विस्तार बढ़ा। कृषि में आधुनिक उन्नतिशील बीजों का प्रयोग, फसल सुरक्षा के लिए कीटनाशी रसायनों का प्रयोग, उर्वरकों के प्रयोग में अभिवृद्धि खाद्यान्न भंडारण की व्यवस्था, कृषि में नवीन संयंत्रों का प्रयोग तथा कृषि आधारित उद्योगों को विस्तार मिला। भारतीय संदर्भ में तत्काल समय की यह विशेष उपलब्धियाँ रही है।

'हरित क्रांति' जन्य प्रमुख समस्याएं

'हरित क्रांति' ने हमें जहाँ लाभ ही लाभ प्रदान किया है वहीं समय परिवर्तन के साथ इससे अनेक समस्याएं भी पैदा हुई है। 'अति सर्वत्र बर्जयेत्' उक्ति के आधार पर हम कह सकते हैं कि जहाँ देश में उत्पादन बढ़ा है, वहीं

ISBN: 978-81-954010-8-6

हमने अपनी मिट्टी के प्राकृतिक गुणों को भी काफी हद तक समाप्त कर दिया। जहाँ मृदा में किसान गोबर की देशी खादों का प्रयोग शुद्ध उत्पादन प्राप्त करता था, वहीं अति उत्पादकता के मद ने हमें रासायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशी रसायनों के अधिक प्रयोग से उत्पादन तो बढ़ा लिया लेकिन मृदा संसाधन करी प्राकृतिक गुणवत्ता नष्ट हो गयी तथा उपहार में अति उत्पादन जनित विभिन्न नये-नये रोगों का प्रसार हुआ। जिसके भुक्त भोगी हम स्वयं हो रहे है 'हरित क्रांति' जनित प्रमुख समस्याएं अग्र प्रकार से हैं -

फोर्ड तथा रॉकफेलर प्रतिष्ठिान द्वारा अनुसंशित चावल की अतिउत्पादक प्रजाति जैपोनिक तथा इंडिका का तत्कालीन केन्द्रीय चावल अनुसंधान संस्थान कटक तथा रायपुर संस्थान के तत्कालीन निदेशक डॉ0 रिद्वारिया ने चावल की बौनी किस्म की प्रजातियों का विरोध इसी आधार पर किया था कि यह प्रजातियॉ कीड़े-मकोड़ों के प्रति अति संवदेनशील है। अतः इससे उत्पादन तो बढ़ेगा लेकिन पर्यावरण के लिए हानिकारक होगा। डॉ0 रिद्वारिया के इस तर्क पर ध्यान न देते हुए उन्हें पद से हटा दिया गया तथा भारत सहित एशिया के अन्य देशों में इसकी खेती विस्तृत पैमाने पर की जाने लगी। पर्यावरण प्रदूषण तथा मृदा प्रदूषण की समस्याओं को देखते हुए उस समय ऐसी योजनाओं का कार्यान्वयन सूझ-बूझ के साथ किया जाना चाहिए था।

संपूर्ण दुनिया के प्रगतिशील चिंतकों, पर्यावरणविदों, अर्थशास्त्रियों तथा कृषि वैज्ञानिकों ने 'हरित क्रांति' की आलोचना करते हुए कहा है कि 'हरित क्रांति' तत्कालीन समस्या के समाधान के लिए उचित थी लेकिन वर्तमान में अति उत्पादन जैसे एक लाभ के लिए अनेक हानियों तथा अपने पर्यावरण को दाव पर लगाना बुद्धिमानी की बात नहीं है, अतः वर्तमान समय में 'हरित क्रांति' जनित लाभ एवं हानियों के सन्दर्भ में पुनर्विचार की

ISBN: 978-81-954010-8-6

आवश्यकता है।

वर्तमान समय में भारतीय कृषि वैज्ञानिक तथा पर्यावरणविद् यह स्वीकार करने लगे हैं कि 'हरित क्रांति' जो साठवें दशक के उत्तरार्द्ध में एक सुखद घटना थी लेकिन अब यह देश के लिए एक समस्या बन चुकी है, जिसका समाधान काफी कठिन है।

'हरित क्रांति' ने निर्धन तथा विकासशील देशों की प्राचीनतम परम्परागत कृषि प्रणाली पर नकारात्मक प्रभाव डाला है। नई कृषि प्रणाली में कीटनाशी रसायनों, उर्वरकों तथा सिंचाई की अधिक आवश्यकताओं ने परम्परागत कृषि संस्कृति में परिवर्तन पैदा किया है।

'हरित क्रांति' में प्रयुक्त अधिक उत्पादनशील प्रजातियाँ एक अधिक संवेदनशील प्रजातियाँ (एचआरबी) थी, जो अधिक सिंचाई उर्वरकों तथा कीटनाशी रसायनों के प्रयोग से अधिक उत्पादन देती थीं। इनके प्रयोग से तीसरी दुनिया के किसानों की सृजनशीलता तथा नवीनता के परिणाम ही समाप्त हो गये, जिससे कृषि बीजों की जैव विविधता का ह्रास हुआ है, जो एक अपूरणीय क्षति है।

नवीन कृषि प्रणाली महंगी होने के कारण छोटे तथा गरीब किसानों को खेती छोड़कर शहरांे की ओर रोजगार की तलाश में पलायन करना पड़ रहा है। खेती में मात्र बड़े किसानों की ही भागीदारी हो गई है। परम्परागत कृषि प्रणाली का स्थान नवीन वैज्ञानिक (औद्योगिक) कृषि प्रणाली ने ले लिया है। यह एक विचारणीय विषय है।

'हरित क्रांति' की अति उत्पादनशील प्रजातियों के लिए सिचाई तथा उर्वरकों की अधिक अवश्यकता हुई, जल प्राप्ति के लिए अधिक गहरे कुँओं की खुदायी की गई तथा अधिक शक्तिशाली पंम्पिग सेटों के प्रयोग से भूगर्भ जल स्तर भी काफी घटा है जो भविष्य में पीने के लिए पानी के अभाव

ISBN: 978-81-954010-8-6

की समस्या का संकेत हैं

वैज्ञानिक कृषि ने प्राचीन भारतीय देशी परम्परागत कृषि का औपनिवेशीकरण करके हमारी खाद्य आत्मनिर्भरता की जड़ांे पर कुठाराघात किया है, जिससे हम अति उत्पादक प्रजातियों तथा प्रविधियों पर निर्भर हो गये है तथा भारतीय किसान अपनी प्राचीन कृषि विरासत को भूलने जा रहे है।

बहुत से कृषि विज्ञानियों ने अधिक लागत वाली एक फसली खेती तथा आनुवंशिक संकरण तकनीक को एक अप्राकृतिकतकनीक तथा बीसवीं सदी की एक बड़ी भूल मान रहे है, जिसके कारण खेती में अनेक नई-नई समस्याएं पैदा हो रही है।

प्रो0 वोरलॉग ने वर्ष 2005 में 'हरित क्रांति' की आलोचना करते हुए कहा कि वर्तमान की आवश्यकतानुसार इसमें परिवर्तन किया जाना चाहिए यथा वैश्विक कृषि प्रणाली और खाद्य सुरक्षा के लिए बहुकोणीय अनुसंधानों पर बल देने की आवश्यकता हैं। उनके अनुसार चावल में रोग प्रतिरोधक लक्षणों को अन्य अनाज में और गेहूँ के प्रोटीनों को चावल, मक्का जैसे अन्य अनाजों में स्थानान्तरण की आवश्यकता है, इसी आधार पर इन्होंने जीन रूपांतरण (जेनेटिक मॅडिफिकेशन) तकनीक तथा जीन इंजीनियरी का भी समर्थन किया तथा इसके प्रयोग में वृद्धि की अपेक्षा की।

'हरित क्रांति' में जीन संशोधित बीज और रासायनिक उर्वरकों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है लेकिन भारत में उस समय 'हरित क्रांति' को जारी रेखने के लिए जिन-जिन चीजों की आवश्यकता थी उस पर ध्यान नहीं दिया गया। जिसका दुष्परिणाम बाद में अनेक समस्याओं के रूपों में देखा गया।

लुधियाना स्थित पंजाब कृषि विश्वविद्यालय में एग्रोइकोनामिक शोध

ISBN: 978-81-954010-8-6

केन्द्र के निदेशक डॉ0 कर्ण सिंह ने कहा है कि "नीति निर्धारकों द्वारा इसके दूरगामी परिणामों पर ध्यान नहीं देने के कारण यह कई मायनों में अधूरा रह गया।" डॉ0 सिंह के अनुसार, "ग्रीन पर इतना जोर दिया गया कि वह 'ग्रेन क्रांति' में परिवर्तित हो गया।"

'हरित क्रांति' द्वारा उत्पादन तो बढ़ गया लेकिन यदि उसके सामाजिक प्रभावों पर दृष्टिपात किया जाय तो 1980 के दशक के मध्य इसका उन्माद फीका पड़ गया। इसमें हमारी भूमि तो प्रदूषित तथा दुष्प्रभावित हुई, साथ ही छोटे किसानों को नकारत्मक परिणाम भी भुगतान पड़ा।

'हरित क्रांति' द्वारा मात्र खाद्य संकट से राहत मिली है। संभाव्य उत्पादकता से वास्तविक उत्पादन अभी कम है। मात्र गेहूँ व चावल को छोड़कर अन्य उत्पादन संतोषजनक नहीं है। 'हरित क्रांति' का प्रभाव मात्र कुछ फसलों तक ही सीमित होने के कारण इसे 'आंशिक क्रांति' भी कहा जाता है। इस क्रांति में कुछ फसलें तो प्रभावित हुई जिन्हें लाभ मिला, लेकिन जिन फसलों के उत्पादन पर ध्यान नहीं दिया गया उनका उत्पादन नहीं बढ़ा।

प्रमुख खाद्यान्न गेहूँ तथा चावल को छोड़कर 'हरित क्रांति' का प्रभाव अन्य फसलों पर नहीं हुआ। भारतीयों के भोजन में कार्बोहाइड्रेट की मात्रा के अनुपात में वृद्धि हुई, लेकिन प्रोटीन तथा वसा की मात्रा कम हुई है। हमारे देश में गरीब परिवारों में इसकी आपूर्ति संभव नहीं है।

वाणिज्यिक फसलों जैसे गन्ना, कपास, पटसन तथा तिलहन फसलांे का उत्पादन 1969-1975 के मध्य नहीं बढ़ा। मात्र गेहूँ तथा चावल को छोड़कर अन्य फसलों के उत्पादन में विशेष प्रगति नहीं हुई। इसी कारण भारतीय कृषि में इसे 'आंशिक पक्षाधात' तक की संज्ञा दी जाती है। जिसमें गेहूँ, चावल का उत्पादन बढ़ा लेकिन शेष फसलों का उत्पादन नहीं बढ़ा।

ISBN: 978-81-954010-8-6

कुछ ही समय के लिए उत्पादन में वृद्धि, कृषि विकास दर में कमी, उत्पादन दर में स्थिरता, खेती में लागत की दर वृद्धि, प्रादेशिक असमानता, पूँजीवादी खेती का विकास, श्रम विस्थापन की समस्या आदि अन्य नकारात्मक प्रभाव है जो 'हरित क्रांति' से ही पैदा हुए है।

'हरित क्रांति' में यदि खाद्यान्न अनाजों (गेहूँ एवं चावल) के उत्पादन को छोड़ दिया जाय तो दुष्परिणाम के रूप में मिट्टी की प्राकृतिक उर्वराशक्ति में ह्रास हुआ है, भूमि में ऊसरीकरण अभिवृद्धि, भूगर्भ जल असंतुलन, खाद्यान्नों की विषाक्तता, पर्यावरणीय प्रदूषण, जैव विविधता का कम होना आदि 'हरित क्रांति' जनित पर्यावरणीय दुष्परिणाम है।

'हरित क्रांति' के मूल आधार उन्नत उत्पादनशील बीज है, इनके प्रयोग बढ़ने के कारण विभिन्न परंपरागत फसल प्रजातियों के बीज समाप्त प्राय होते जा रहे है। अपने ही देश में चावल तथा गेहूँ की जितनी अधिक प्रजातियाँ पहले थी आज उनकी संख्या घटी है। बीज विविधता के समाप्त प्राय होने से उत्पन्न पूर्व में ही संकट को पहचानकर विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन ने चेतावनी दी थी कि यदि तीसरी दुनियाँ के राष्ट्रों की बीज विविधता (खाद्यान्न फसलों के) नष्ट हुई तो इन्हें सुरक्षित रखना काफी समस्याप्रद होगा। संकरण बीजों द्वारा जो अति उत्पादन हुआ है उसके साथ अनेक महंगी, खादें, कीटनाशी रसायन, सिंचाई की अधिक आवश्यकता जैसे सहायक तत्व जुड़े है, जिनका प्रयोग सामान्य कृषकों के लिए काफी कठिन है। परंपरागत कृषि में किसानों द्वारा प्राचीन काल से प्रयोग में लायी जा रही बीज विविधता धीरे-धीरे घट रही है। इनके घटने के कारण खेती में कुछ गिने-चुने उन्नत किस्मों पर ही निर्भरता बढ़ी है। देश के विभिन्न भागों में भौगोलिक विभिन्नता के कारण भिन्न-भिन्न वातावरण के लिए अलग-अलग बीज प्रयोग में लाये जाते थे, लेकिन उच्च उत्पादक (भ्ल्ट) बीजों के आने के

ISBN: 978-81-954010-8-6

बाद बीज विविधता का ह्रास हुआ है। भारतीय कृषकों ने हजारों वर्षो में विभिन्न क्षेत्रों तथा विभिन्न परिस्थितियों में उगने वाली अनेकों किस्म के बीजों को प्रयोग के आधार पर खोजा था आज यह समाप्त प्राय हो रहा है। यह एक चिंतनीय विषय है।

'हरित क्रांति' के स्थान पर सदाबहार 'हरित क्रांति': 'हरित क्रांति' की सफलता का श्रेय बीजों, उर्वरकों, कीटनाशी रसायनों तथा सिंचाई के साधनों को दिया जाता है। हम उत्पादन में काफी आगे है, लेकिन समस्या है पर्यावरण के रक्षा की। पर्यावरण (मृदा, भूमि, जल, वायु) भी सुरक्षित रहे तथा उत्पादन भी शुद्धता पूर्वक प्राप्त हो। मनुष्य तथा जीवों का जीवन भी सुरक्षित रहे। आज 'हरित क्रांति' के स्थान पर 'सदाबहार हरित क्रांति' (Evergreen Revolution) की बात की जा रही है। 'पर्यावरण मित्र' या 'पर्यावरण स्नेही तकनीकी' सिद्धान्तों पर आधारित तकनीकी को ही 'सदाबहार हरित क्रांति' 'एवरग्रीन रिवोल्यूशन' कहा गया है। इसे सतत् कृषि विकास (Sustainable Agricultural Development) तथा अधिक उत्पादन के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जैव उर्वरकों एवं समेकित पोषक तत्व प्रबन्धन (Low dose of integrated nutrient management) के आधार पर प्राप्ति संभव है। प्रो0 स्वामीनाथन भी 'हरित क्रांति' से 'सदाबहार हरित क्रांति' (Green Revolution to Evergreen revolution) के विषय में किसानों का आह्वान करते हुए कहते है कि अब फसलों पर खर्च बढ़ रहा है, मृदा की प्राकृतिक संरचना, उपजाऊपन तथा उर्वरा शक्ति का ह्रास हो रहा है, यह न तो टिकाऊ है तथा न ही उर्वरा शक्ति को बढ़ाने वाली है। कितना ही उर्वरकों का प्रयोग बढ़ाया जाय, एक सीमा के बाद उत्पादन नहीं बढ़ता है, यह 'फर्टीहोलिक' हो चुकी है। हानिकारक तथा महंगें रसायनों से किसानों

ISBN: 978-81-954010-8-6

पर व्यय भार अधिक बढ़ रहा है। सभी समस्याओं के समाधान के रूप में समय तथा पर्यावरण की माँग के अनुसार सार्थक एवं सस्ते स्रोत के विकल्प के रूप में जैविक खेती एक 'टिकाऊ कृषि प्रविधि' के रूप में सामने आयी है। जैव उर्वरक पराक्रम्य शक्ति स्रोत के साथ पर्यावरण को क्षति नहीं पहुँचाते है। यह विभिन्न हानिरहित अपनी उपापचयी क्रियाओं के फलस्वरूप स्रावित होने वाले एण्टीबायोटिक्स, विटामिन्स एवं हार्मोन्स द्वारा पौधों के विकास में सहायक होते हैं। पहले कुछ सूक्ष्म जीवों का प्रयोग प्रयोगशालाओं में किया गया बाद में 1980 के पश्चात् इनका प्रयोग पश्चिमी देशों प्रमुखतः अमेरिका, ब्रिटेन तथा यूरोप के कुछ क्षेत्रों में किया गया। इस प्रकार के जीवाणुओं को प्रो0 जे0 डब्ल्यू0 क्लोयपर आस्टिन वि0वि0 (अमेरिका) ने प्लांट ग्रोथ प्रमोटर राइजोवैक्टीरिया (पीजीपीआर) अर्थात् पौधों की बृद्धि करने वाला जीवाणु कहा। प्रमुख समस्या अति उत्पादन लेने के लिए रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग आवश्यक है, वहीं बिना इनके प्रयोग का अधिक उत्पादन नहीं होगा, तथा प्रयोग करने पर पर्यावरण के पाश्र्व प्रभावों से भी नहीं बचा जा सकता है। इसका विकल्प ही 'सदाबहार हरित क्रांति' की परिकल्पना है जो इन्हीं समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करती है। विभिन्न प्रयोगों से सरसो, तिल, सूरजमुखी, मूंगफली तथा अरहर आदि फसलों को बीजोपचारित कर रोपण करने के बाद दस से लेकर चालीस गुना तक पैदावार में वृद्धि हुई है। कुछ जीवाणुओं से बीज शोधित करने के बाद रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग की मात्रा भी फसलों में कम हुई है। जैव उर्वरकों के प्रयोग के साथ कुछ मात्रा में रासायनिक उर्वरकों का दक्षतापूर्वक समेकित प्रयोग करने से फसलों का उत्पादक कई गुना बढ़ गया है। यह अनेक कवकों व जीवाणुओं से बचाव भी करता है। कुछ वर्षो से जैव उर्वरकों की मांग लगातार बढ़ रही है, क्योंकि इसके प्रयोग से कृत्रिम विषैले रसायनों व उर्वरकों के प्रयोग में कमी आयी है।

ISBN: 978-81-954010-8-6

इनसे उत्पादित जैव फसलें सामान्य फसलों के मूल्य से ज्यादा मूल्य दे रही है। जैविक उर्वरकों पर आधारित फसल उत्पाद जन जीवन के स्वास्थ्य, जैव विविधता, प्राकृतिक स्रोतों एवं पर्यावरणीय दृष्टि से भी अनुकूल है। यह नवीन कृषि तकनीक 'सदाबहार हरित क्रांति' की परिकल्पना (तकनीकी सिद्धान्तों) जनहित के लिए भी लाभदायक है। इसके प्रयोग से रासायनिक कृषि उत्पादों के लाभ में कमी देखी जा रही है। जैव-उर्वरक एवं समेकित पोषक तत्व प्रबन्धन के सम्मिलित प्रयोग से फसलांे की अधिक पैदावार के साथ-साथ मिट्टी की उर्वरकता शक्ति के ह्रास में भी कमी आयी है। यही एक उपाय है जिससे पर्यावरण को प्रदूषण से बचाया जा सकता है। जैविक खेती पर किये गये सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ है कि जैविक विधि से कुछ उत्पादन में 9.2 प्रतिशत की कमी आयी है लेकिन उत्पाद के मूल्य में 22 प्रतिशत का लाभ प्राप्त हुआ है। इसके प्रमुख कारणों में उत्पाद की 20 से 40 प्रतिशत आर्थिक मूल्य वृद्धि तथा 11.7 प्रतिशत फसल उत्पाद पर लगने वाले खर्च में कमी आना है। जैविक खेती से मिट्टी की प्राकृतिक संरचना, उपजाऊपन, जैविक क्रियाओं तथा सूक्ष्म जैव विविधता में भी वृद्धि होती है। वर्ष 2000 ही तुलना में 2006 में जैविक उत्पादों की मांग तथा बिक्री में दुगुना बढ़ोतरी हुई है। भारत में लगभग 528171 हेक्टेयर भूमि 44926, प्रमाणित आर्गेनिक फार्म हाउस (खेत) तथा कुल कृषि भूमि का 0.3 प्रतिशत है उस पर जैविक खेती की जा रही है। (तालिका-04 एवं 05) एपीइडीए (Agricultural and Processed Food Products Export Development Authority) के अनुसार भारत के लगभग 501 मिलियन कार्बनिक उत्पाद का निर्यात किया जाता है। कार्बनिक उत्पादों के प्रति बढ़ती जागरूकता तथा शेष संस्थानों की सहायता के कारण प्रभावित क्षेत्रफल में 200 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

ISBN: 978-81-954010-8-6

(तालिका-06) कार्बनिक खेती स्वस्थ पारिस्थितिकी निर्माण एवं आर्थिक रूप से सस्ती होने के कारण अकार्बनिक खेती की तुलना में बेहतर है। उच्च गुणवत्ता युक्त तथा कम उत्पादकता के बावजूद इसके उत्पादों की मांग राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बढ़ रही है। यूरोपीय देश कार्बनिक खाद्य उत्पादों एवं खेती पर 60 मिलियन डॉलर प्रति वर्ष खर्च रहे हैं। पश्चिमी देशों की तरह हमारे देश में भी ऐसे ही शोधों की आवश्यकता है जिससे भारत की तस्वीर (खेती के संदर्भ) बदल सकती है।

तालिका - 04

कार्बनिक खेती में उपयोग होने वाला क्षेत्रफल

	कुल कृषि योग्य भूमि (प्रतिशत में)	कुल कार्बनिक खेत (फार्म) वर्ष 2007-08
संपूर्ण विश्व	0.65	718]744
ऑस्ट्रेलिया	2.8	1550
चीन	0.4	1600
अर्जेंटीना	1.7	1448
यू0एस0ए0 (2005)	0.5	8493
इटली	9.0	45115
उरूग्वे	6.1	630
स्पेन	3.7	17214

ISBN: 978-81-954010-8-6

ब्राज़ील	0.3	15000
जर्मनी	4.8	17557
यू0के0	3.8	4485
कनाडा	0.9	3571
फ्रांस	2.0	11640
भारत	0.3	44926

तालिका - 05

विश्व उर्वरक (खपत) आवश्यकता (मि0मि0 टन में)

रासायनिक उर्वरक	**2008**	**2009**	**2013** (अनुमानित)
नाइट्रोजन (यूरिया)	99.3	101.1	110.4
फास्फोरस (डीएपी)	35.9	37.2	43.9
पोटैशियम (एमओपी)	24.8	25.0	3.10
कुल योग	160.0	162.2	185.3

स्रोत - पी0 हैयर, आई0एम0ए0 मई 2009

ISBN: 978-81-954010-8-6

तालिका - 06

विभिन्न जैव उर्वरकों का अलग-अलग फसलों पर उपयोग करने पर दर्ज की गयी फसल उत्पादन में वृद्धि

फसल	वृद्धि (प्रतिशत)
मक्का	05-08
गेहूँ	08-16
जौ एवं जई	09-10
चावल	14-42
आलू	18-25
गोभी	19-33
चुकंदर	07-10
खीरा	05-5
गाजर	60-144
सरसों	27-44
तिल	26-52

आने वाले भविष्य में देश की खेती का प्रारूप ही बदल जायेगा। अब मात्र मिट्टी की जांच ही नहीं होगी बल्कि मृदा मंे नैनो तकनीकी द्वारा विभिन्न समस्याओं का समाधान किया जायेगा। विश्व के बहुत से देशों में नैनो

ISBN: 978-81-954010-8-6

पार्टीकल्स की मदद से मृदा प्रबंधन किया जा रहा है। अमेरिका स्थित सिकोया पैसिफिक रिसर्च आॅफ ऊटा में उल्लेखनीय शोध कार्य किया जा रहा है। शोध केन्द्र द्वारा 'सॉयल सैट पद्धति का विकास किया गया है जो मिट्टी को बॉधने में सहायक होगी। इसमें मिट्टी सैट नैनो स्तर पर रासायनिक क्रियाएॅ करके मृदा को लम्बे समय तक क्षरण से बचायेगा। प्रदूषित तत्वों को प्रभावित मिट्टी में चिन्हित करके इंजैक्शन द्वारा उसे दूर करना, पानी एवं उर्वरकांे का घोल बनाकर पौधों तक पहुँचाना, जल की शुद्धि के लिए नैनो पार्टीकल्स, नैनोक्रोम, नैनो मेम्ब्रेन का प्रयोग होना, पराजीनी फसलों का विकास चावल की पौष्टिकता के लिए मछली की प्रोटीन का प्रयोग, गोल्डेन चावल, लौह तत्व से युक्त धान का विकास, फूलों पर मनचाहा रंग, एक ही मक्के की बली में विभिन्न प्रकार के रंगों का होना, अधिक तापमान में पैदा होने वाली फसलों का विकास, फ्लाई ओवर पर खेती का विकास आदि नवीन खेती भविष्य में महत्वपूर्ण होगी। आज की नवीन खेती में ऐसे जीनों को फसलों तक पहुँचाया जा रहा है जो उन्हें स्वयं कीड़ों से लड़ने की शक्ति देंगे। तब मनुष्यों तथा मित्र कीटों के लिए भी हानिकारक नही होंगे। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिकों ने बैंगन, टमाटर, पत्तागोभी तथा धान में बीटी जीन डालकर महत्वपूर्ण परीक्षण किए गये है, जो लाभदायक सिद्ध हो रहे है। केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान ने भी आलू में ट्यूबर मॉथ कीट के नियंत्रण के लिए बीटी जीन डाला है। विभिन्न फसलों पर कीटों के नियंत्रण के लिए अनेक बीटी जीन डाले जा रहे है। भविष्य की खेती में अति ठंडक में टमाटर के सुरक्षित रहने, खाद्यान्नों के खराब होने की भी युक्तियाँ तैयार कर ली गई है। भविष्य की खेती कुछ ऐसी होगी जहाँ पौधे खुद ही अपनी आवश्यकता की मांग करेंगे। खड़ी फसल को कीट नहीं बल्कि फसलों के जीन कीटों को मारेंगे, माटी की जॉच ही नहीं, कण-कण की

ISBN: 978-81-954010-8-6

सेटिंग नैनो कण करेंगे, पानी को मार्ग भी नैनो कण दिखायेंगे, बीजों का अंकुरण, पुष्पों का विविध रंगांे में खिलना, बहुरंगी गुलाब के फूलों का खिलना मल्के में विभिन्न रंगों के दानों का होना, एक ही सब्जी के पेड़ों में विभिन्न फलांें का लगना, धान में चमेली की महक, पाले का अवरोधी टमाटर, अपनी लालिमा तथा कड़ेपन को सुरक्षित रखेगा। फलों तथा सब्जियों में दवाओं के टीके लगाये जायेंगे तथा ग्लोबल वार्मिंग से भी भविष्य की फसलें सुरक्षित रहेगी। ऐसी होगी हमारी भविष्य की खेती। जिस पर विश्वास ही नहीं हो रहा है, कि यह सब कैसे संभव होगा? तथा उसके लिए तकनीकी किस प्रकार से कैसे प्रयुक्त होगी, यह निश्चित ही आश्चर्यजनक होगा, आने वाली कल की खेती में।

संदर्भ

1. *Norman Borlaug Talk transcrip-34th Convocation of the Indian Agricultural Research Institute – New Delhi - 1996*
2. *प्रो0 सिंह, जगदीश एवं प्रो0 सिंह के0एन0 'हरित क्रांति' भारत एवं समीपवर्ती देश, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर-1996, पृष्ठ-117-190*
3. *Vandana Shiva, 'The Green Revolotion in the Punjab'*
4. *Rockfeller, Foundation – Accelerating the Green Revolution Ghana in Africa*
5. *राव, बी0पी0, भारत की भौगोलिक समीक्षा, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर वर्ष-2007, पृष्ठ-176-180*
6. *Moseley, W.G., 2008 In search of a better Revolution – Minneapolistor*

ISBN: 978-81-954010-8-6

7. वर्ल्ड जर्नल आॅफ माइक्रोबायोलॉजी व बायोटेक्नोलॉजी, अंक-24, 2008
8. यूरोपियन जर्नल आॅफ सॉयल बायोलाजी, अंक-45, अप्रैल-2009
9. पी0 हैयर, आईएफ0ए0, मई-2009
10. चैहान, पी0आर0, 'भारत का वृहद भूगोल-कृषि एवं आनुषंगिक व्यवसाय बसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर-2009, पृष्ठ-284-295
11. व्हीलर, एच, स्टेस्टिक्स एण्ड इमेजिंग टेªडस Ifoam, Bonnand F1BL, Frick
12. दयाल नरसिंह, आलेख 'हरित क्रांति' के जनक नॉर्मन वोरलॉग विज्ञान प्रगति, हिन्दी पत्रिका, अंक-03, मार्च-2010, पृष्ठ-5-10
13. संपादक-आलेख-"क्या विश्व खाद्य संकट तीसरे महायुद्ध को नियंत्रण देगा?" विज्ञान प्रगति हिन्दी प्रतिका, अंक-03, मार्च-2010, पृष्ठ-11-16
14. शर्मा कुलदीप, आलेख "कल की कृषि बहुत कुछ हट के" 'विज्ञान प्रगति' हिन्दी पत्रिका अंक-03, मार्च-2010, पृष्ठ-17-23
15. कुमार संदीप एवं माहेश्वरी डी0के0, आलेख 'जैविक खेती पर्यावरण की पुकार' विज्ञान प्रगति, हिन्दी पत्रिका अंक-03, मार्च-2010 पृष्ठ-34-40
16. डॉ0 चैहान, वीरेन्द्र सिंह एवं डॉ0 गौतम अलका कृषि-रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ, 2010-11 पृष्ठ-270-273
17. संदीप कुमार एवं डी0के0 माहेश्वरी- आलेख-'सदाबहार हरित क्रांति' विज्ञान प्रगति, अंक-8, अगस्त-2011, पृष्ठ-29-34